www.xtrapapers.com

M12/1/A1HIN/HP1/HIN/TZ0/XX

22120129

International Baccalaureate®
Baccalauréat International
Bachillerato Internacional

HINDI A1 – HIGHER LEVEL – PAPER 1
HINDI A1 – NIVEAU SUPÉRIEUR – ÉPREUVE 1
HINDI A1 – NIVEL SUPERIOR – PRUEBA 1

Thursday 10 May 2012 (morning)
Jeudi 10 mai 2012 (matin)
Jueves 10 de mayo de 2012 (mañana)

2 hours / 2 heures / 2 horas

INSTRUCTIONS TO CANDIDATES

- Do not open this examination paper until instructed to do so.
- Write a commentary on one passage only.
- The maximum mark for this examination paper is *[25 marks]*.

INSTRUCTIONS DESTINÉES AUX CANDIDATS

- N'ouvrez pas cette épreuve avant d'y être autorisé(e).
- Rédigez un commentaire sur un seul des passages.
- Le nombre maximum de points pour cette épreuve d'examen est *[25 points]*.

INSTRUCCIONES PARA LOS ALUMNOS

- No abra esta prueba hasta que se lo autoricen.
- Escriba un comentario sobre un solo fragmento.
- La puntuación máxima para esta prueba de examen es *[25 puntos]*.

© International Baccalaureate Organization 2012

www.xtrapapers.com

*नीचे दो उद्धरण दिए गए हैं, १ तथा २। इन दोनों में से किसी **एक** पर व्याख्या लिखिए।*

१.

तो वे बदहवास सी भीड़ भरे चौराहे को पार करते बस के पीछे दौड़ी जा रही थी। साड़ी की चुन्नटों को एक हाथ से थोड़ा उठाए, दाहिने हाथ के पर्स को पेट पर चिपकाए चिल्लाए जा रही थीं-रोकना भाई, रोकना ! इस बस के छूटने का मतलब था पन्द्रह बीस मिनट या आधे घंटे का इंतज़ार। फिलहाल वे अपनी तमाम दुनियावी इच्छाओं के एवज में नहीं चाहेंगी कि यह बस छूट जाए। बेकार में प्रिसींपल की कुदृष्टि और विभागाध्यक्ष के व्यंग्यबाण कौन चाहेगा। कई बार तो छीना झपटी का कर्म करते हुए वे उन्हीं के महाविद्यालय की मीना को भी भूल जाती हैं जो अगले स्टॉप से उन्हें कभी कभी मिल जाती हैं। उनकी ऑख उस समय अर्जुन की ऑख होती है और मछली की ऑख होती है वह खाली जगह जो कभी भी किसी भी वक्त बस में बन सकती है। यहाँ तक कि कोई भद्दा आदमी जानबुझकर उनके उरोजों से टकरा जाता, पर वे लक्ष्य नहीं छोड़ती, परवाह नहीं करती। अब बस में जाना है तो यह सब लगा ही रहेगा। अब क्या वे हवाई जहाज से जाएँगी ? (हवाले से डॉक्टर साहब) अब उन्हें डोसाइल (घरेलू, नाजुक) औरतें अच्छी नहीं लगती। इन्हें देखकर वे घबराने लगती हैं। अपने पुराने रूप की झलक। इतनी दब्बू डरपोक वे थीं क्या बच्चों की नींदों के साथ जगती, डॉक्टर साहब के खर्राटों के साथ उँघती-इससे ज्यादा क्या ? किताबों के समंदर में डूबती, सुर, तुलसी, मीरा के गहन आदर्श प्रेम के सपने देखती। घनानंद के साथ रोती। बिहारी के साथ सौन्दर्य निहारती-इससे ज्यादा क्या ? कुल उन्नीस वर्ष में ही तो अपनी गर्दन पर भोला सा चेहरा लगाए दुनिया की समझ से बेखबर, अपनी किताबों का छोटा सा संसार लिए डॉक्टर साहब के साथ चली आई थी। दरअसल डॉक्टर साहब जिस मारूति कार में जीते हैं उसी की सीट को वे बस की सीट की तरह देख लेते हैं। कहाँ तो उन्होंने सोचा था डिग्री कॉलेज की मस्ती की नौकरी होगी और कहाँ देहरादून से ऋषिकेश दौड़ने की त्रासदी। तो क्या करें पत्नी को मिली सरकारी नौकरी छुड़वा दें ? वाह कैसे ? पर डॉक्टर साहब यह नहीं जानते कि अब वे उन्हें घर बैठने को कहें तो वे नहीं बैठेंगी। हुआ यूँ था कि जब डॉक्टर साहब अपनी मारूती में बैठाकर उन्हें बस स्टेशन तक लाए, तो वहाँ ऋषिकेश के लिए कोई बस नहीं थी। पूछताछ काउंटर पर हर बार यही पता चलता कि बस आती ही होगी। डॉक्टर साहब अपनी आदत से विपरीत आधे घंटे तक इंतज़ार करते रहे। आखिरकार जब बस आई तो डॉक्टर साहब ड्यूटी पर लेट होने लगे थे और "यही ऋषिकेश वाली बस, जो आ रही है, इसी में बैठ जाना" ऐसा निर्देश देकर चले गए। क्या डॉक्टर साहब के लिए अपनी नौकरी इतनी महत्त्वपूर्ण है जिसके आगे वे नातों, रिश्तों, व्यक्ति और समाज को बौना करके देखते हैं ? "ऋषिकेश जाना है ?" उनके बाएँ कान के पास कोई फुसफुसाया। वे भौंचक। "आइए नहीं तो जगह नहीं मिलेगी।" जब वे यंत्रचालित सी उस आदमी के पीछे बस में चढ़ रही थीं तो उनके किताबी ज्ञान ने उन्हें हलका सा धिक्कारा था। उस आदमी ने बड़ी शालीनता से उनके पैसे लेकर उनका टिकट भी ला दिया। वे कृतज्ञ हुई। सभ्य, शालीन, अधेड (जिन्हें अब वे कमीने अधेड़ कहती हैं) उन पर कृपादृष्टि फेरने लगे। निकट और निकट। अधेड़ का बायॉ अंग और उनका दायॉ अंग लगभग एक से हो गए थे। इस कृतज्ञता से कैसे मुक्त हों ? इस मुक्ति की कामना करते हुए अपना दायॉ पैर उठाकर बायें पैर के ऊपर रख लिया। चेहरा खिड़की से लगभग बाहर। "ऋषिकेश में कहाँ जाओगी ? बदबू की एक लहर, पसीने की इतनी तेज गंध, वे इसे सहन करते हुए मुँह उधर किये हुए ही बोलीं "डिग्री कॉलेज।" उन्हें लगा कि डिग्री कॉलेज कहने से उनका कद दो फुट बढ़ गया है और अब तो यह आदमी जरूर ठीक व्यवहार करेगा। पढ़ने या पढ़ाने। पढ़ाने, क्या ? अब उनका ध्यान गया कि बदबू पसीने की कम और उसके मुँह में भरे तम्बाकू की ज्यादा है। वितृष्णा से उन्हें उबकाई आयी। "मेरी बेटी भी स्कूल में पढ़ाती है।" कहकर उस अधेड़ ने अपना बायॉ हाथ, जो अब तक उनके दाएँ हाथ से सटा था, उठाकर उनके कंधे के पीछे कर लिया। अगर बस जरा सा हिचकोले खाये तो वे उसकी गोद में गिरते हुए बाहुपाश में बँध जाएँगी। "अभद्र।" "कितने बजे लौटती हो ?" "पता नहीं" उन्होंने थोड़ा सख्त मुद्रा में कहा। "फिर भी कोई टाइम तो होगा। मुझे भी लौटना है, साथ ही लौटते... यह कहते हुए वह थोड़ा सा घबराया।" प्रेम और रोमांस ! एक अतृप्त आकांक्षा-वे हतप्रभ थीं।

www.xtrapapers.com

भारतीय समाज के बेचारे ये बूढ़े बुजुर्ग। डोईवाला में बस रूकी। लोग उतरने लगे। इससे पहले कि लोग बस में चढ़ते, वे फुर्ती से उठी और दूसरी सीट पर धँस गई। अरे, अरे, यहाँ नहीं उतरना है। वह दाँत कुरेदता हुआ चीखा और खिसीया गया। अब वे अपने बारे में सोच सकती थीं। सोचा भी। डॉक्टर साहब उम्र में ग्यारह वर्ष बड़े थे और हमेशा उन्हें ग्यारह वर्ष नादान बच्ची की हैसियत में बनाए रखा। घर-खर्च वे खुद चलाते थे। आलू प्याज से लेकर कपड़े-लत्ते-गहने तक वे खुद लाते या मँगवाते थे। रोटी-कपड़ा-छत और इन उपर्युक्त चीजों के बाद उन्हें भला अलग से पैसा किस लिए चाहिए ? वैसे भी औरत के हाथ में पैसा रखने से औरत बिगड़ जाती है। (हवाले से डॉक्टर साहब) पहले दो चेक डॉक्टर साहब ने अपने एकाउंट में जमा करवाए लेकिन तीसरे महीने विद्यालययी अनिवार्यता के चलते उन्हें अपना एकाउंट ऋषिकेश में खोलना ही पड़ा। उनके वेतन से संबंधित सारे मामले डॉक्टर साहब ही देखा करते थे। सोचा था उन्होंने, इस नौकरी में आते ही उनके दुःख दारिद्रय के दिन समाप्त हो जाएँगे। पर कहाँ, डॉक्टर साहब उनकी नौकरी पर कुंडली मारकर बैठे कि वे देखती रह गई। अगर पैसा न दे तो घर में टेंशन, पारिवारिक अशान्ति का कारण पैसा ? छिः वे कभी सोच भी नहीं सकती, लो ले जाओ पैसा, पर शांति बने रहने दो, पर शांति किसकी ? डॉक्टर साहब की या उनकी यू ही नहीं मिली है उन्हें नौकरी करने की आज़ादी। इस तरह के विचारों ने इसी बस में कोंच मारी थी।

मुक्ति प्रसंग, अल्पना मिश्र, *छावनी में बेघर* (२००८)

www.xtrapapers.com

२.

वर्षा के दोहे

अंधकार सा छा गया
घटा घिरी घनघोर।
रात समझ कर तब उठा
नभ में चंद्र चकोर।
तम्बू ताने घन खड़े
रिमझिम बन्दनवार
पुरवा पंथ बुहारती
बरखा रही पधार।
नदी किनारे खेत में
चढ़कर आई बाढ़।
इतना बरसा गरजकर
अबकी बार असाढ़।
नदी निहारे उफनकर
पुरवा परसे पॉव।
राखी लेकर आ गई
बिजली बेटी गॉव।
मक्का हॅसती खेत में
लहराता है धान।
बाज न आए बाजरा
फेंक रहा मुस्कान।

डॉ धुवेंद्र भदौरिया, *सप्तरंग दैनिक जागरण* (अगस्त २०१०)